लोकदेवत्व

लोकदेवता हरदौल

देवी-देवताओं के संबंध में न जाने कितनी कथाएँ प्रचलित हैं । कोई सुरसा की तरह मुँह फैलाये और कोई द्रोपदी के चीर की तरह मनमाना शरीर बढ़ाये । कभी-कभी रक्तबीज की तरह खून की एक-एक बूँद से दूसरी कथाएँ जन्मती हैं और उनके सही रूप का पता लगाना बहुत कठिन हो जाता है । कौन-सी कथा में कितनी सच्चाई है और कितनी कल्पना, यह तो स्वयं देवता भी नहीं बता सकते । मुश्किल यह है कि एक तथ्य-रूपी वृक्ष पर कथाओं की अमरबेलें ऐसे लिपटी रहती हैं कि वृक्ष को खोजना किसी के वश की बात नहीं है । फिर भी हर देवी-देवता के अपने चमत्कार हैं, जो मन में एक रहस्यपूर्ण, भयमिश्रित फुरफुरी भर देते हैं, अपने वरदान हैं, जो भीतर छिपे लोभ की मौन चहचहाहट जगा देते हैं औरइ न दोनों का संगम है देवता, जो हमारी आत्माओं पर हावी बना रहता है । लेकिन हरदौल ऐसे लोकदेवता हैं, जो साढ़े तीन सौ वर्ष पहले १७वीं शती में हमारी ही तरह के आदमी थे । हमीं जैसे उलझनों में बिंधे, संघर्षो, में जूझे और सोच में सीझे । आखिर इतने पास का, या यों कहिए कि हाल का एक आदमी देवता कैसे बन गया । न तो तुलसी औ र सूर जैसे महाकवि देवता बन सके और न शिवाजी और गाँधी जैसे राजनेता । फिर कौन-सी ऐसी जादुई बात थी, जिसने हरदौल को देवत्व की सीढ़ी पर बिठा दिया ? यह समझने के लिए हरदौल को ठीक से परखना आवश्यक है ।

प्रामाणिकता के निकष पर

इतिहास के ग्रंथों में हरदौल की चर्चा नहीं के बराबर है और जनश्रुतियों में भरी पड़ी है ! इतिहासकार भी क्यों लिखे ! उसे तो राजा या बादशाह से मतलब, आदमी के देवता होने से उसका क्या संबंध संभवतः इसी वजह से इतिहास लोक से बहुत दूर होता गया और लोक का इतिहास किंवदंतियों और जनश्रुतियों में ही पलता रहा । हरदौल के संबंध में भी यही न्याय हुआ है, लेकिन मैं यहाँ कुछ ठोस आधारों का साक्ष्य देकर प्रामाणिक निष्कर्ष निकालने के लिए कटिबद्ध हूँ ।

कुछ विद्वानों और कवियों ने हरदौल का वास्तविक नाम 'हरदेवसिंह' या 'हरिसिंह देव' बतलाया है, जबकि आचार्य केशव ने अपने ग्रंथ 'वीरसिंहदेव चरित' (रचना-काल सं. १६६४ वि.) में 'पुनि हरदौल बुद्धि गंभीर' लिखा है, जिससे 'हरदौल' नाम ही प्रामाणिक ठहरता है । आचार्य केशव उसी समय ओरछा के राजकवि थे, अचएव विवाद का कोई प्रश्न ही नहीं है । इसी ग्रंथ के आधार पर हरदौल के वंशवृक्ष की जातकारी भी मिलती है । किन्तु आश्चर्य है कि एक प्रसीद्ध विद्वान् ने इसकी कुछ पंक्तियों का भ्रामक अर्थ लगाकर जो वंशवृक्ष अंकित किया है, वह हरदौ ल को ओरछा के राजा रामसाहि के पौत्र भारतसाहि का पुत्र ठहराता है, जबकि उन पंक्तियों में कोई अस्पष्टता नहीं है-

तिनतें लहुरे उर आनियै । राजा बीरसिंघ जानियै ।।
सुत तिनके एकादस सुनौ । एकादस रुद्रहि जनु गिनौ ।।
जेठ जुझारराइ रनधीर । पुनि हरदौ ल बुद्धि गंभीर ।।

निर्विवाद है कि हरदौ ल ओरछानरेश वीरसिंहदेव के द्वितीय पुत्र थे ।इ तिहासकार पं. गोरेलाल तिवारी के अनुसार उनकी माता का नाम गुमानकुँवरि था और वे इन्हीं रानी से उत्पन्न चार सगे भाई-हरदौ ल, भगवंतराय, चंद्रभान और बिसुनसिंह थे

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र पहला संस्करणः १९९५

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.

तथा एक बहिन-कुंजकुँवरि ।

हरदौल की जन्मतिथि विवादग्रस्त है । ओरछा में फूलबाग की बैठक और रामराजा मंदिर के चौक में बने लगभग चार फीट ऊँचे स्तंभ में सं. १६६५ वि. अंकित है, जो बहुत पुरानी नहीं है । कुछ विद्वानों ने 'ओरछा रिकाई दस्तूरात' पृ. २५५ के आधार पर उसे सं. १६६५, माघबदी २, शनिवार, रात्रि ९ बजे माना है । लेकिन केशवरचित 'वीरसिंहदेव चरित' की रचनातिथि-सं. १६६४ वि.,बसंत के शुक्ल पक्ष की अष्टमी बुधवार तो असत्य नहीं मानी जा सकती और उस ग्रंथ में हरदौल को 'बुद्धि गंभीर' वाला लिखा गया है तथा उनके तीनों सगे भाइयों के नाम भी दिये गए हैं, जिससे स्पष्ट है कि हरदौल का जन्म सं. १६६४ के पूर्व का है । 'बुद्धि गंभीर' को ध्यान में रखकर यदि अनुमान लगाया जाय, तो वे सं. १६६४ में कम-से-कम आठ-दस वर्ष के रहे होंगे और इस आधार पर हरदौल की जन्मतिथि सं. १६५६ वि. या उसके आसपास मानना उचित प्रतीत होता है ।

आप सोचते होंगे कि जन्मतिथि के इस गुणा-भग की क्या जरूरत थी, पर में यह बताना चाहता हूँ कि मृत्यु के समय हरदौल एक भावावेशी नवयुवक नहीं थे, जो भावुकता के झोंके में आकर अपने प्राण दे देता है, वरन् विचारशील व्यक्ति थे, जो बहुत सोच-समझकर प्राणों की बाजी लगाता है । वस्तुतः उनकी मृत्यु जानी-समझी थी । मृत्युतिथि के संबंध में अधिक झमेला नहीं है । ओरछा की बैठक और मंदिर-स्तंभ में सं. १६८८ खुदा हुआ है, जबकि पं. गोरेलाल तिवारी सं. १६८५ बतलाते है ।-१ निश्चित है कि सं. १६८५ और १६८८ के बीच कभी उनकी मृत्यु हुई थी । इस प्रकार लगभग २९ और ३२ वर्ष के अन्तराल की आयु में एक आदमी का बलिदान कोरी भावुकता का परिणाम नहीं माना जाना चाहिए, वह तो एक प्रौढ़ मस्तिष्क की उपज था ।

वह घटना जोइ तिहास बन गई

हरदौल के जीवन की उस प्रमुख घटना की खोज किसी भी ऐतिहासिक शोध से कम नहीं है, जिसके कारण वे इतनी लोकप्रसिद्धि पा गए । पं. गोरेलाल तिवारी ने लिखा है कि सं. १६८५ में ओरछानरेश जुझारसिंह किसी कारण हरदौल से अप्रसन्न हो गए थे । उन्होंने अपनी रानी से उनका नेवता करवा कर भोजन में विष दिलवा दिया था । रानी ने देवर हरदौल को सच्ची घटना बता दी थी, फिर भी हरदौल विषमिश्रित भोजन खाकर मृत्यु को प्राप्त हुए । तिवारी जी ने स्वीकार किया है कि उन्होंने यह तथ्य जनप्रतलित कथा से ही लिया है ।-२ परंतु जनश्रुतियों में यह घटना कई रूपों में मिलती है । मैंने ओरछा और आसपास के क्षेत्रों में जाकर अनेक जनश्रुतियाँ संगृहीत की हैं, जिनके आधार पर तीन प्रमुख वर्णनाएँ खोजी जा सकती हैं ।

लोकमुख में जीवित तीन वर्णनाएँ

पहली वर्णना जो बहुप्रचलित है, इस प्रकार चलती है । ओरछानरेश जुझारसिंह की रानी चम्पावती अपने देवर हरदौल से बहुत अधिक प्रेम करती थी और हरदौल भी भौजी को माता की तरह मानते थे । जुझारसिंह के मुगल-दरबार या मुगल-सेना में रहने पर हरदौल ही ओरछा का राजकाज सँभालते थे । वे न्यायप्रियता, सत्यवादिता, वीरता आदि गुणों के कारण काफी लोकप्रिय हो गए थे । इस कारणई र्ष्यालु दरबारियों और मुगलप्रतिनिधि ने मिलकर राजा के कान भरे और देवर-भौजी के विशुद्ध प्रेम को अनैतिक और लांछित बताया । शक की कोई दवा नहीं होती, फलस्वरूप राजा ने रानी के पतिव्रत धर्म की परीक्षा लेनी चाही और उसे देवर को विष देने के लिए विवश किया । रानी ने विषमिश्रित भोजन हरदौल

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र पहला संस्करणः १९९५

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.

को परोसा, पर उनकी आँखें बरस पड़ी । पूछने पर उन्होंने सच्ची बात बता दी । अब हरदौल के प्रेम की परीक्षा थी और उसमें वे सोलह आने खरे उतरे । भोजन करने पर उनके प्राण-पखेरू उड़ गये ।

दूसरी वर्णना इससे भिन्न है । कहा जाता है किर ओरछा में नियुक्त मुगल प्रतिनिधि सरदार हिदायत खाँ के बेटे ने राजपरिवार की किसी बेटी के साथ छेड़खानी की थी और जबर्दस्ती बलात्कार का प्रयत्न किया था । हिदायत खाँ हरदौल की बैठक के बगल में फूलबाग की बारादरी में रहता था । हरदौल को जब किसी रक्षक ने संकेत दिया, तब उन्होंने उस के बेटे को मार डाला और हिदायत खाँ को फूलबाग खाली करने का आदेश दिया । हिदायत खाँ ने क्रुद्ध होकर बादशाह से शिकायत की, फलस्वरूप अनवर खाँ पठान के नेतृत्व में मुगल-सेना ने ओरछा घेर लिया, परंतु हरदौल ने उसे बुरी तरह पराजित कर दिया । अनवर खाँ युद्ध में मारा गया और सैनिकों को घेर-घेर कर उन्हें अच्छा सबक सिखाया गया । इस पर मुगल बादशाह शाहजहाँ ने राजा जुझारसिंह को गद्दी से हटाकर ओरछा को अधीन करने की धमकी दी । राजा चिंतित होकर ओरछा आए और गद्दी बचाने के लिए हरदौल को हटाने की युक्ति खोजने लगे । तभी हरदौल के किसी खास विरोधी ने रानी द्वारा विष दिलाने की तरकीब सुझाई । उसने राय दी कि यदि रानी मना करती हैं, तो उन पर अनुचित संबंध का लांछन लगाने से काम चल जाएगा । राजा ने इसी का अनुसरण किया । शेष घटना पहली जैसी है ।

तीसरी वर्णना इन दोनों से मेल नहीं खाती । उसके अनुसार सारा दोष राजा का था । राजा की अनुपास्थिति में हरदौल इतने लोकप्रिय और प्रभावशाली हो गए थे कि वे राजा की आँखों में काँटे की तरह गड़ने लगे । राजा को यह चिंता थी कि कहीं हरदौल उनकी गद्दी न छीन ले । इसलिए उन्होंने हरदौल को रास्ते से हटाने के लिए विष देने का षड्यंत्र स्वयं रचा था । शेष घटना यथावत है ।

पवित्र प्रेम का एक खुशबूदार गुलदस्ता

उपर्युक्त तीनों वर्णनाएँ एक दूसरी से भिन्न अवश्य हैं, पर तीनों में प्रकारांतर से भौजी और देवर के प्रेम तथा विष देने की घटना विद्यमान है ।इ ससे स्पष्ट है कि हरदौल अपनी भौजी के प्रेम की पवित्रता सिद्ध करने के लिए बलिदान हो गए । वास्तव में यह बलिदान एक तरफा त्याग नहीं है, वरन् उसमें दोनों ओर के कई आदर्शों का संगम है । रानी का पातिव्रत्य और देवर के प्रति वत्सल भाव तथा हरदौल का भौजी से प्रेम, उसके धर्म की रक्षा का संकल्प और अपने प्रेम की पवित्रता में खरे उतरने का उत्साह । तात्पर्य यह है कि हरदौल का प्राणत्याग वैयक्तिक प्रेम का प्रतीक मात्र नहीं है, वरन् उसमें भारतीय संस्कृति के आदर्श का पूरा उत्कर्ष है । वह नारी और पुरुष-दोनों के पवित्र प्रेम का ऐसा गुलदस्ता है, जिसकी सुगंध कभी बासी नहीं होती ।

प्रासंगिक कथाओं से झाँकता व्यक्तित्व

जहाँ तक प्रासंगिक कथाओं का प्रश्न है, उनमें अंतर का कारण दोषारोपण सकी भिन्नता है । लोक राजा जुझारसिंह को दोषी समझता है, भले ही दोष राजलोभ से हो या ईर्ष्या से अथवा किसी संदेह से । राजा के सन्देह के कारणस्वरूप भी कई प्रसंगों की रचना हुई है, जैसे रानी का हरदौल को चन्द्रहास तलवार दे देना और बाद में उसका हरदौल के पास बरामद किया जाना, राजा को चाँदी के और हरदौल को सोने के थाल में भोजन परोसा जाना आदि । कुछ कथाएँ हरदौल के व्यक्तित्व को और ऊँचा उठाने के लिए बुनी गई हैं, उदाहरण के लिए, ओरछा में एक वीर पठान का अखाड़े में

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र पहला संस्करणः १९९५

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.

दंगल हाँकना और ओरछा की प्रतिष्ठा बचाने के लिए हरदौल का उससे द्वंद्व युद्ध तथा उस पर विजय । इस घटना से तत्कालीन अखाड़ों का यथार्थ रूप और उनमें वीरों का प्रतिद्वंद्विता का चित्र उभर आता है तथा हरदौल का शौर्यसंपन्न व्यक्तित्व उजागर हो जाता है । इसी प्रकार हरदौल का मुगलविरोधी अभियान और युद्ध उनके देशप्रेम या राष्ट्रीयता का आभास देता है । आशय यह है कि इन सभी प्रसंगों के मूल में कोई न कोई तथ्य बीज की तरह छिपा हुआ है ।

सामूहिक प्राणत्याग की अद्‌भुत मिसाल

हरदौल के मरणोपरांत की कई घटनाएँ प्रसिद्ध है, जिनमें चार प्रमुख हैं । कहा जाता है कि हरदौल की मृत्यु पर एक मेहतर और कुत्ता ने अवशिष्ट भोजन खाकर प्राण दे दिये थे, इसीलिए हरदौल के चबूतरे के साथ उन दोनों के स्मृतिचिन्ह भी बनाये जाते हैं । मेहतर की चौंतरिया (चबूतरे का छोटा रूप) तो पहिचान बन गई है, संभवतः इसी कारण उच्च और निम्न वर्ग-दोनों एक-सी श्रद्धा रखते हैं और सभी हरदौल की पूजा करते हैं । एक घटना यह भी प्रसिद्ध है कि हरदौल के सात सौ साथियों ने प्राण-त्याग कर उनका अनुसरण किया था । बहुत गहराई से देखने पर यह राजा के प्रति मौन विरोध का सूचक प्रतीत होता है ।-३ सामूहिक प्राणत्याग उस युग की एक ऐसी मिसाल है, जो इतिहास में नया अध्याय जोड़ती है । दूसरी घटना राजा के प्रति प्रजा का असंतोष है । एक जनश्रुति के अनुसार प्रजाजनों ने राजा से हरदौल का हत्या का स्पष्टीकरण माँगा था । कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया भग ४, पृष्ठ १८५ में लिखा है कि 'जुझारसिंह को अपने लोगों के विरोध का भी सामना करना पड़ा, क्योकि उसने अपनी पत्नी का अपने भाई हरदौल सिंह से गुप्त प्रेम के संदेह पर भाई को विष दिलवा दिया था, जिसके अनुयायी बहुत अधिक थे । ओरछा की जनता का आक्रोश जहाँ हरदौल की लोकप्रियता प्रकट करता है, वहाँ उस जनपद की जागरूक चेतना का उदाहरण भी प्रस्तुत करता है ।

प्रेत के चमत्कार

शेष दो घटनाएँ हरदौल के प्रेत से जुड़ी हुई हैं । लोकप्रचलित है कि हरदौल की बहिन कुंजकुँवरि अपनी पुत्री के विवाह का निमंत्रण देने या भात माँगने ओरछा आई थीं । उन्होंने राजा जुझारसिंह को हत्यारा मानकर नेवता नहीं दिया अथवा जुझारसिंह ने किसी कारणवश लेने से इनकार कर दिया, दोनों प्रकार के विवरण मिलते हैं । लेकिन यह सभी मानते हैं कि कुंजा हरदौल को उसी जगह पर न्यौता रख आई, जहाँ उनकी दाह-क्रिया की गई थी । समय पर मोहरों, सोने-चाँदी के आभूषणों और अन्य कीमती सामग्री से लदे घोड़ों या गाड़ियों के साथ हरदौल की सवारी दतिया पहुँची । हरदौल की अवाई पर सलामी में तोपें दागी गईं, मार्ग में मंगल कलश लिये खड़ी नारियों के अंचल अपने-आप मोहरों से भर गए और कुंजा का घर चीकट से जगमगा गया । बहिन और भाई की प्रेमभरी भेंट और वर के आग्रह से हरदौल का दर्शन देना, दोनों प्रसंग चमत्कारपूर्ण हैं ।-४ इन्हीं का प्रभाव जनजन पर छाया हुआ है ।इ नके अलावा हरदौल की विदाई के समय कुंजा का सभी के विवाहों में इसी प्रकार की सहायता का वचन लेना, सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ है । इस दृष्टि से हरदौल सामाजिक हित से बँध जाते हैं और उनके देवत्व का प्रमुख आधार यही लोकमंगल का भावना है ।

दूसरी घटना प्रेत हरदौल द्वारा मुगलों को परेशान करने से संबंधित है । जनश्रुति के अनुसार प्रेत ने मुगल प्रतिनिधि हिदायत खाँ को इतना सताया था कि वह ओरछा छोड़कर दिल्ली चला गया था । इस घटना से एक तरफ हरदौल की बदले की भावना झलकती है और दूसरी तरफ उनकी देशप्रेम की तीव्रता । प्रेत में राष्ट्रीय चेतना की जागृति एक अद्‌भुत उदाहरण है, जो इस योनि के इतिहास में विरल है ।-५ एक किंवदंती यह भी प्रचलित है कि प्रेत ने मुगल बादशाह शाहजहाँ को पलंग से गिरा दिया था और अनेक प्रकार से भयभीत किया था, ताकि बादशाह यह घोषणा करवा

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र पहला संस्करणः १९९५

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.

दे कि राज्य के हर गाँव में हरदौल के चबूतरे बनाये जाएँ और उनकी पूजा हो ।इ ससे हरदौल की महत्ता घटती ही है, अतएव इसकी सत्यता संदिग्ध है । इसी प्रकार यह भी लोकमुख में जीवित है कि प्रेत ने बादशाह से हठ किया था कि जुझारसिंह की गद्दी छीन ली जाय । यह प्रसंग भी हरदौल की गरिमा को क्षति पहुँचाता है । वस्तुतः इस प्रकार की घटनाँए प्रेत की शक्ति और प्रभाव दिखाने के लिये कल्पित की गई हैं । हरदौल के चबूतरे तो उनके लोकादर्शों के प्रतीक हैं । उनके लोक ने श्रद्धा और पूजा-भाव से प्रतिष्ठित किया है, किसी बादशाह या राजा की आज्ञा से नहीं ।इ स प्रकार हरदौल का प्रेत हरदौल से कहीं अधिक प्रभावशाली हो गया है ।

देवत्व उनके पीछे-पीछे चला

सभी घटनाओं को गहराई से परखने पर यह प्रकट है कि हरदौल को लोकदेवता बनाने में दो प्रसंग ही प्रमुख हैं-एक तो भोजी-देवर के प्रेम को बहुत ऊँचाई पर ले जाने के लिए हरदौल का प्राणोत्सर्ग और दूसरा भाँजी के विवाह में सहायक होकर लोकमानव पर विजय । दूसरा प्रसंग चमत्कारों से भरा है और चमत्कार देवता की आवश्यक शर्त है, शायद इसीलिए लोक को अधिक प्रभावी लगा है । इसी कारण प्रत्येक परिवार विवाह के पहले हरदौल के चबूतरे पर निमंत्रण रखता है और बाद में उनकी पूजा करता है । इस रूप में हरदौल विवाहों के देवता ठहरते हैं । ऐसा लगता है कि भौजी-देवर के पवित्र प्रेम से उत्पन्न हरदौल का देवत्व अब लोकमानस में विवाह के वरदाता के रूप में बदल गया है ।

लोकमानस अच्छों-अच्छों की परवाह नहीं करता । वह तो केवल उन्हें ही पूजता है, जो उसके अपने होते हैं, उससे हिलमिल कर एक हो जाते हैं और उसके लिए निछावर हो जाते हैं । हरदौल ने कोई धर्म नहीं चलाया पर धर्म उनके पीछे-पीछे चला, कोई ग्रंथ नहीं लिखा पर उन पर अनेक ग्रंथ लिखे गए और कोई राक्षस नहीं मारा पर द्वेष का राक्षस अपने-आप मर गया । सही तो यह है कि हरदौल देवत्व के पीछे नहीं चले, पर देवत्व अनके पीछे चलकर बड़प्पन पा गया ।

लोकगीतों के राजा

आज भी गाँव-गाँव में हरदौल के चबूतरे हैं और घर-घर में गूँजते उनके लोकगीत । १७वीं शती से लेकर आज तक के तीन सौ वर्षों में हरदौल पर साहित्य की विपुल राशि भरी पड़ी है । हरदौल चरित की एक अलग काव्य-परम्परा ही खड़ी हो गई है । आख्यानक गीतों का एक ताँता-सा लगा हुआ है । कहानी, नाटक, रूपक आदि कोई भी विधा ऐसी नहीं है, जिसमें हरदौल का चित्रण न हो । लोकगीतों के राजा तो हरदौल ही हैं । विवाहों के आगे-पीछे हर गली में एक करुण कथा चल पड़ती है और छोड़ जाती है-एक मांगलिक अनुगूँज-

> गाँउन गाँउन चोंतरा उर देसन देसन नाँउ ।
>
> लाला तोरौ भलो है लछारौ नाँउ ।...

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र पहला संस्करणः १९९५

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.

संदर्भ-संकेत

१. बुंदेलखण्ड का संक्षिप्त इतीहास, गोरेलाल तिवारी, पृ. १४४

२. वही, पृ. १४५

३. ओरछा में अभिनीत हरदौल-संबंधी नाटक एंव ओरछा के रामराजा मन्दिर के पुजारी से साक्षात्कर ।

४. काव्य-ग्रंथों में संग्रथित बुंदेलखण्ड में प्रचलित किंवदंतियाँ ।

५. हरदौल का प्रेत, नर्मदा प्रसाद गुप्त, अवकाश, फरवरी, द्वितीय, १९८० ।

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र पहला संस्करणः १९९५

All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photocopy, recording or by any information storage and retrieval system, without prior permission in writing.